कोरोना एवं पर्यावरण

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़

पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

कोरोना ने जहां एक और दुनिया भर में कई विकट चुनौतियां पैदा की हैं, वहीं दूसरी ओर प्राकृतिक सौंदर्य के अद्भूत व जीवंत नजारे भी देखने को मिल रहे हैं। इतिहास गवाह है कि अतीत में जब–जब इस प्रकार की भयानक महामारियां आई हैं, तब–तब पर्यावरण ने सकारात्मक करवट ली है। यकीनन कोरोना संक्रमण काल में प्रकृति का यह रूप मानवीय जीवन के लिए भले ही क्षणिक राहत देने वाला हो, परन्तु जब संक्रमण का खतरा पूरी तरह खत्म हो जाएगा, तब क्या पर्यावरण की यही स्थिति बरकरार रह पाएगी? जब सभी देशों के लिए विकास की रफ्तार को तेज करना न केवल आवश्यक होगा, बल्कि मजबूरी भी होगी, तब क्या ऐसे कदम उठाए जाएंगे जो प्रकृति को बिना क्षति पहुंचाए सतत् विकास की ओर अग्रसर हो सकेगे?

प्रकृति की मनुष्य को चेतावनी

पर्यावरणीय समस्या का यह अल्पकालिक सुधार न तो स्थायी समाधान है और न ही वांछनीय परिणाम। हालांकि वर्तमान स्थिति को प्रकृति की ओर से दी हुई चेतावनी समझनी चाहिए जो मनुष्य की जीवन–शैली और विकास प्रक्रिया के तौर–तरीकों को बदलने का अवसर प्रदान करती है। इतिहास ऐसे कई उदाहरणों से भरा पड़ा है जो यह साबित करता है कि महामारियों का गहरा प्रभाव पर्यावरण पर पड़ा है, परन्तु महामारी के फौरन बाद आर्थिक विकास की रफ्तार को बढ़ावा देने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का बड़े पैमाने पर अमर्यादित दोहन भी किया गया है। ऐसे में कोरोना महामारी से उत्पन्न अल्पकालिक पर्यावरणीय सुधार से बहुत अधिक खुश होने की जरुरत नहीं है, बल्कि मानव, प्रकृति और आर्थिक विकास के अंतर्सम्बन्धों को नए सिरे से परिभाषित करने की आवश्यकता है।

प्रकृति के अति दोहन का दुष्परिणाम

कई पर्यावरणविदों का मानना है कि यह वायरस मनुष्य और प्रकृति के बीच पैदा हुए प्राकृतिक असंतुलन का दुष्परिणाम है। वैज्ञानिकों का कहना है कि अत्यधिक मांस का उत्पादन, रोगाणुरोधी प्रतिरोध और बढ़ते वैश्विक तापमान जैसे कारक वन्यजनिक विषाणुओं को मनुष्यों में फैलने और भयावह रूप धारण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। साथ ही जलवायु संकट विषाणु जनित रोगों से लड़ने के प्रति हमारी प्रतिरोधक क्षमता भी कम कर रहा है। दरअसल, विगत कुछ दशकों से हो रहे पारिस्थितिकीय परिवर्तन, बेरोकटोक आर्थिक विकास और प्राकृतिक संसाधनों के बेहताशा दोहन ने पारिस्थितिकीय तंत्र के अनुचित तथा असंतुलित प्रयोग को बढ़ाया है।

ग्लोबल वार्मिंग

बढ़ती जनसंख्या ने शहरीकरण एवं औद्योगीकरण का विस्तार किया, जिससे व्यापक स्तर पर खनिज संपदा घटी है और वनोपज का दायरा सिमट गया है। इससे जैविक और प्राकृतिक असंतुलन की स्थिति पैदा हुई है। पर्यावरणीय विसंगतियों का खुलासा करती विश्व मौसम विज्ञान संगठन की रिपोर्ट 'द स्टेट ऑफ द ग्लोबल क्लाइमेट' बताती है कि हाल के वर्षों में ग्लोबल वार्मिंग के कारण तापमान बढ़ोतरी के कई रिकॉर्ड टूटे हैं। जहां वर्ष 2019 सबसे गर्म वर्ष रहा, वहीं वर्ष 2010–2019 के दशक को सबसे गर्म दशक के रूप में रिकॉर्ड किया गया।

पर्यावरणीय क्षति केवल जैव–विविधता को ही नुकसान नहीं पहुंचाती, मानवीय जीवन को भी बदतर स्थिति में ले आती है। रिपोर्ट बताती है कि प्राकृतिक आपदाओं की वजह से 2018 में दुनिया में 82 करोड़ लोग भूखमरी के कगार पर थे और लगभग 67 लाख लोग विस्थापित हुए। ये तथ्य हमें सोचने पर मजबूर करते हैं कि आखिर पिछले कुछ दशकों में ऐसा क्या हुआ कि प्रकृति की यह दुर्गति हुई? यकीनन संकट के इस दौर में मनुष्य के अति–भौतिकवाद, उत्पादनवाद और उपभोगवाद को विकास का पर्याय मान लेने की मानसिकता पर सवाल उठा है। आधुनिकता की चकाचौंध से लोगों में व्यक्तिवाद और सुखवाद की प्रवृत्ति बढ़ी है। मानवीय उत्थान के लिए तो ये चीजें अच्छी लगती हैं, लेकिन नई–नई

वैज्ञानिक तकनीकों द्वारा पारिस्थितिकी तंत्र को नियंत्रित करने की मनोवृत्ति ने पर्यावरणीय विसंगति को जन्म दिया है।

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम अपनी एक रिपोर्ट में इस बात की पुष्टि भी कर चुका है कि मनुष्यों में हर चार महीनों में एक नई संक्रामक बीमारी सामने आती है। इन बीमारियों में से करीब 75 फीसदी बीमारी जानवरों से आती है। इसके बावजूद इंसान यह भूलता जा रहा है कि जैव–विविधता को चोट पहुंचाना कितना खतरनाक हो सकता है? आज आधुनिकता व वैज्ञानिकता का दंभ भरने वाली तमाम आर्थिक शक्तियां इस बीमारी के आगे बेबस हैं। देर से ही सही, पर संक्रमण की दवा भी खोज ली जाएगी, लेकिन तब तक बहुत कुछ तबाह हो चुका होगा। इसलिए अगर हमें वाकई में आर्थिक विकास और संवहनीयता के बीच सह–अस्तित्व की भावना बनाए रखनी है तो उपभोग और जीवन–शैली को इस तरह बनाना होगा जिससे प्रकृति पर नकारात्मक असर नहीं पड़े।

पर्यावरण संरक्षण से ही सफलता

आज कोरोना जैसी महामारी और पर्यावरणीय विसंगतियों को दूर करने के लिए आर्थिक स्तर पर मूलभूत संरचनात्मक बदलाव लाने होंगे। कोरोना ने हमें यह अवसर दिया है कि स्थानीय और वैश्विक स्तर पर अर्थव्यवस्था और पर्यावरणीय राजनीति को पारिस्थितिकी सम्मान और न्याय के तर्ज पर फिर से परिभाषित किया जाए। भूमंडलीकरण के बरक्स स्थानीयकरण को बढ़ावा देने की भी चर्चा हो रही है, लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इस बीमारी की तरह पर्यावरणीय समस्या भी वैश्विक है, इसलिए स्थानीय सेवाओं और रोजगार को बढ़ावा देने के साथ–साथ वैश्विक संस्थाओं में सहयोग और निवेश को भी मजबूत किया जाना आवश्यक है। न केवल हरित अर्थव्यवस्था और पर्यावरणीय–नवीनीकरण से जुड़े कार्यक्रम को बढ़ावा देने की जरुरत है, बल्कि व्यक्तिगत, कानूनी व प्रबंधकीय स्तर पर भी परिस्थितिकी प्रबंधन व संरक्षण को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इन तमाम प्रयासों, नवाचारों, पारदर्शिता, जवाबदेही और मजबूत राजनीतिक इच्छाशक्ति के सहारे हम इस संकट से उबरने में कामयाब हो सकते हैं।